निरुक्त के अध्ययन के उद्देश्य

निरुक्त के अध्ययन के उद्देश्यों को अर्थात् इसकी उपयोगिता, उसके महत्त्व को विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा जा सकता है-

1. प्रथम अध्याय के प्रथम-पाद के प्रारम्भ में ही 'समाम्नायः समाम्नातः स व्याख्यातव्यः' कहकर निरुक्तकार यास्क ने स्पष्ट किया है कि निघण्टु के शब्दों की व्याख्या करना निरुक्त का काम है, अतः यह भाष्य है। दुर्गाचार्य ने भी इसे भाष्य कहा है। विन्टरनित्स इन्हें प्रथम भाष्यकार तथा पतञ्जलि ने 'भाष्यकारों का राजकुमार' कहा है। स्पष्टतः शब्दों का अर्थबोधन निरुक्त का प्रथम उद्देश्य है।

2. शब्दों का अर्थबोधन करना निरुक्त का काम है तथा यास्क ने उदाहरणस्वरूप वैदिक मन्त्रों (लगभग 600) को उद्धृत किया है। अतएव मन्त्रगत पदों के अर्थप्राप्ति निमित्त निरुक्त का अध्ययन आवश्यक है। अतएव कहा गया है- 'इदमन्तरेण मन्त्रेषु अर्थप्रत्ययो न विद्यते'।

3. प्राचीनकाल में चौदह विद्यास्थानों में निरुक्त की भी गणना होती है। याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है-

"पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्राङ्गमिश्रिताः।
वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश"।।

निरुक्त का व्याकरण से अविच्छिन्न सम्बन्ध है। व्याकरण शब्दों की रचना (बहिरङ्ग) की व्याख्या करता है तथा निरुक्त उनके अर्थ (अन्तरङ्ग) की खोज करता है। इसके लिए वह शब्दों की प्रकृति का पता लगाता है तथा उसके अर्थ से संगति दिखलाते हुए पूरे शब्द के अर्थ का अनुसन्धान करता है परन्तु व्याकरण अपवादों से परिपूर्ण है, अतः यह व्याकरण पर सर्वस्व अर्पण नहीं करता है-

"न संस्कारमाद्रियेत, विशयवत्यो हि वृत्तयो भवन्ति"।

4. कर्मकाण्ड की दृष्टि से भी निरुक्त उपयोगी है। किस मन्त्र में कौन देवता है- इसके द्वारा निर्णय किया जा सकता है। यज्ञकर्म में देवता से बहुत से विधान होते हैं। इसे निरुक्त के द्वारा देखा जा सकता है। निरुक्त के ज्ञाता इस विषय में देवताओं के चिह्न पहचानते हैं। इन बातों को इन वाक्यों में कहा गया है-

"अथापि याज्ञे दैवतेन बहवः प्रदेशाः भवन्ति। तद् एतेन उपेक्षितव्यम्। ते चेद् ब्रूयुः– 'लिङ्गज्ञाः अत्र स्मः' इति। उदाहरण देखें– "इन्द्रं नत्वा शवसा देवता वायुं पृणन्ति"– यहाँ अग्नि के मन्त्र में वायु एवं इन्द्र के चिह्न हैं। और भी, 'अग्निरिव मन्यो त्विषितः सहस्व' इति– यहाँ मन्यु के मन्त्र में अग्नि का चिह्न है।

5. पद विभाग की दृष्टि से निरुक्त का अध्ययन अपेक्षित है, कहा गया है-

"इदमन्तरेण पदविभागो न विद्यते" (ज्ञायते)

अर्थ नहीं जानने वाला यह नहीं समझ सकता कि किसी पद में एक ही शब्द है अथवा अनेक। जैसे–"अवसाय पद्भते रुद्र मृळ" इति-

अवसाय पैर वाले के लिए हे रुद्र, सुखकर हों- यहाँ पैर वाला अवस = गायें, जो रास्ते का भोजन है। अवस = भोजन- यहाँ अव् तथा अस् प्रत्यय के योग से ही पद बनता है, अतः 'अवस' एक पद है, जिसका चतुर्थी एकवचन में 'अवसाय' बना। परन्तु 'अवसायाश्वान्'= घोड़ों को खोलकर- यहाँ 'अव' उपसर्ग के साथ 'स्यो' (खोलना) धातु से ल्यप् प्रत्यय (पूर्वकालिक) लगा है। यहाँ दो पदों के कारण पद-विभाग अपेक्षित है, फलतः पद-पाठ करने वाले 'अवऽसाय' ऐसा पद-पाठ करते हैं। यहाँ पर एक बात ध्यातव्य और भी है कि व्याकरण पद सिद्धि तो कर सकता है परन्तु पद की जाति का निर्णय तो निरुक्त से ही सम्भव है। अतः उपयोगिता की दृष्टि से निरुक्त, व्याकरण से आगे की चीज है।

6. वेदों के अर्थों को जाने बिना उन्हें रट-जाना निष्फल है। तथा अर्थ-ज्ञान की महत्ता निरुक्त से ही जानी जानी सकती है। फिर ज्ञान की प्रशंसा तथा अज्ञान की निन्दा होती है- **"अथापि ज्ञान प्रशंसा भवति अज्ञाननिन्दा च"।**

इस सन्दर्भ में आगे कहते हैं-

(क) "स्थाणुरयं भारहारः किलाभूदधीत्य वेदं न विजानाति योऽर्थम्।
योऽर्थज्ञ इत्सकलं भद्रमश्नुते नाकमेति ज्ञानविधूतपाप्मा।"

(ख) "यद् गृहीतमविज्ञातं निगदेनैव शब्यते।
अनग्नाविव शुष्कैधो न तज्ज्वलति कर्हिचित्"

7. भाषा-विज्ञान की एक शाखा है- अर्थविज्ञान, जिस पर सूक्ष्म विचार सन् 1898 ई. में "Essede Semantique" इस फ्रेञ्च ग्रन्थ में प्रस्तुत किया गया, परन्तु इसकी नींव तैयार करने का काम तो यास्क का ही है। अर्थ में परिवर्तन किस तरह होता है- इसका उल्लेख अनेक स्थलों पर है। यास्क की दृष्टि से सादृश्य, रूपक एवं तद्धित प्रयोग ही अर्थ परिवर्तन के कारण हैं। सादृश्य का उदाहरण देखें- 'कक्ष्या' घोड़े की रस्सी है जो उसके कक्ष (काँख) से बँधी होती है। इसी घोड़े की काँख के सादृश्य से मनुष्य की काँख भी 'कक्ष' कहलाती है। (तत्सामान्या मनुष्यकक्षः बाहुमूलसामान्या दश्वस्य)। पशु के चार पैर होते हैं, जिसके सादृश्य से पाद का अर्थ 'चौथाई हिस्सा' हो गया। (पशुपाद प्रकृतिः प्रभात्रपदः)। अर्थ संकोचन का उदाहरण देखें- मृग = पशु (वैदिक), हरिण (संस्कृत)। तद्धित-प्रयोग लिए 'गौ' को देखें- जिसका अर्थ है, 'पृथ्वी' और इसी तरह इसका अर्थ 'गाय' भी है। गाय से सम्बद्ध अर्थों का बोध कराने के कारण तद्धित प्रयोग कहा जाएगा। अर्थादेश देखें- गौ से सूर्य, चन्द्रमा तथा सभी प्रकार के किरणों का बोध होने लगता है।

8. निरुक्ताध्ययन का एक उद्देश्य यह है कि यज्ञकर्म में देवता के नाम से किए गए बहुत से विधि-निर्देश, निरुक्त द्वारा जाने जा सकते हैं क्योंकि निरुक्त द्वारा ही 'किस मन्त्र में कौन प्रधान देवता-इसका निर्णय किया जा सकता है और तभी किसी देवता को हविष्य देने के लिए किसी मन्त्र का उच्चारण किया जा सकता है।

अभिप्राय यह है कि निरुक्त के अध्ययन का एक उद्देश्य यह भी है कि इससे अर्थविज्ञान से सम्बन्धित तथ्यों की जानकारी मिल जाती है। स्पष्टतः निर्वचन-शास्त्र निरुक्त के अध्ययन के उद्देश्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं।